Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies,
Online ISSN 2278-8808, SJIF 2019 = 6.380, www.srjis.com
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL, SEPT-OCT, 2020, VOL- 8/61

झारखंड में जनजातियों के विस्थापन का उनकी सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन पर प्रभाव का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

आशीष अंशु , Ph. D.

असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, राजकीय माहाविद्यालय गणाई गंगोली, पिथौरागढ़

Email id : *bhu.ashish@gmail.com*

Abstract

आधुनिकीकरण एवं औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया ने पिछले कुछ शताब्दियों में विकास के कुछ जिन भयावह दुष्परिणामों को जन्म दिया हैं उनमें से विस्थापन एक है । विस्थापन की प्रक्रिया में सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक परिणाम–दुष्परिणाम अंतर्निहित होते हैं । आधुनिक सभ्यता के विकास के लिए ऐसा लगता है की विस्थापन अपरिहार्य जरूरत बन गया है या कह सकते हैं की बना दी गयी है ।

झारखंड जैसे खनीज सम्पन्न राज्य आधुनिक समाज की विकास जरूरतों को पूरा करने की कीमत अपने जल , जंगल , जमीन के संतानों को विस्थापित कर चुका रहा है । इस राज्य की आदिवासी बहुल जनसंख्या को इस प्रक्रिया में अपनी समृद्ध सामाजिक और सांस्कृतिक विरासत की पूंजी को गाँवा कर चुकनी पड़ रही है । प्रस्तुत शोध पत्र में विस्थापन की चुनौतियों के परिणामस्वरूप झारखंड के जनजातीय आबादी के समक्ष उत्पन्न हो रही सामाजिक और सांस्कृतिक चुनौतियों के समजशास्त्रीय संदर्भ में समझने का प्रयास किया गया है ।

मुख्य संकेतक *: विस्थापन, जनजाति, सामाजिक–सांस्कृतिक प्रभाव।*

Scholarly Research Journal's is licensed Based on a work at www.srjis.com

भूमिकाः–

झारखंड दो शब्दों 'झाड़' (वन) और 'खंड' (क्षेत्र भूमि) से मिलकर बना है अर्थात वह क्षेत्र या भूमि जो वनों से परिपूर्ण है । 15 नवंबर 2000 को भारतीय गणराज्य के 28वें राज्य के रूप में झारखंड का अस्तित्व सामने आया इससे पूर्व यह बिहार राज्य का अंग था । झारखंड सदियों से भारत के कई सारे मूल निवासियों का गृह क्षेत्र रहा है । 2011 की जनगणना के अनुसार झारखंड के कुल आबादी का 26 प्रतिशत आबादी जनजातीय आबादी है । झारखंड में कुल 32 जनजातीय समूह निवास करती हैं जिनमें प्रमुख

Copyright © 2020, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

जनजातियों में मुंडा, संथाल, उराँव, खड़िया, गोंड, कोल, असुर, बैगा, हो, खरवार, लोहरा, पहाड़िया आदि है ।

झारखंड की भूमि हमेशा से खनिज संपदा से भरपूर रही है । छोटानागपुर का यह पठाड़ी क्षेत्र अपनी खनीज संपदा की प्रचुरता के कारण इसे भारत का 'रूढ़' क्षेत्र भी कहा जाता है । खनीज संपदा की प्रचुरता के कारण यह क्षेत्र हमेशा से बाहरी लोगों को आकर्षित करता रहा है । अंग्रेजों के शासन काल से लेकर आज तक जनजातीय भूमि का अधिग्रहण और खनिज संपदा के दोहन निरंतर जारी है । इसके कारण बड़े पैमाने पर यहाँ के मूल निवासियों को अपने जल, जंगल और जमीन से विस्थापित होने की पीड़ा झेलनी पड़ी है । अपनी जल जंगल जमीन से विस्थापन के कारण जनजातीय समाज को अपनी सामाजिक और सांस्कृतिक विरासत से भी विस्थापित होने की पीड़ा सहनी पड़ी है । विस्थापन को सामान्य अर्थ व्यक्ति के मूल स्थान को सरकार अथवा किसी एजेंसी के द्वारा अपने कब्जे में लेना अथवा अधिग्रहण करना और उसके मूल निवासियों को उस स्थान को छोड़कर किसी अन्य स्थान पर जाने या बसने को वाध्य करने से है ।

अध्ययन के उद्देश्य :–

1.झारखंड में जनजातियों पर विस्थापन का सामाजिक प्रभाव का अध्ययन करना ।

2.विस्थापन के कारण जनजातियों की सांस्कृतिक चुनौतियों का अध्ययन करना ।

शोध प्रश्न :–

1. झारखंड में जनजातियों पर विस्थापन का क्या सामाजिक प्रभाव पड़ा है ?

2.विस्थापन के कारण जनजातियां किन सांस्कृतिक चुनौतियों का सामना कर रही है ?

अध्ययन का क्षेत्रः–

अध्ययन का क्षेत्र झारखंड राज्य है । राज्य का विस्तार 23.45′ उत्तरी अक्षांश से 85.30′ पूर्वी देशान्तर तक है । यह राज्य कुल 79174 वर्ग किलोमीटर के दायरे में विस्तारित है जिसमें कुल 24 जिले हैं । इसके उत्तर में बिहार पूर्व में पश्चिम बंगाल दक्षिण में ओडिशा और पश्चिम में उत्तर प्रदेश और छत्तीसगढ़ अवस्थित है । राज्य का ज्यादतर हिस्सा छोटानागपुर के पठारी क्षेत्र का हिस्सा है जो खनीज संपदा से परिपूर्ण है । पूरे भारत वर्ष में सर्वाधिक खनीज संपदा इसी राज्य में है । राज्य की कुल आबादी 2011 की

Copyright © 2020, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

जनगणना के अनुसार 32988134 लाख है जो भारत की कुल जनसंख्या का 2.72 : है । जिसकी लगभग 26 प्रतिशत आबादी जनजातीय आबादी है ।

पद्धति :–

इस अध्ययन के लिए गुणात्मक शोध पद्धति को अपनाया गया है । यह अध्ययन द्वितीयक स्त्रोतों के अध्ययन सामाग्री पर आधारित है । इसके लिए झारखंड संदर्भ ग्रंथ , झारखंड जनसम्पर्क विभाग, जनगणना 2001 एवं 2011 एवं अन्य प्रकाशित शोध पत्रों तथा संदर्भ ग्रंथों का सहारा लिया गया है । अध्ययन के विश्लेषण हेतु वर्णनात्मक शोध अभिकल्प का चयन किया गया है ।

सैद्धांतिक अभिमुखन :

विस्थापन की प्रक्रिया के सैद्धांतिक पक्ष पर हम दृष्टि डालें तो दो धारायें स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है । एक धारा प्रकार्यवादियों का है तो दूसरा पक्ष मार्क्सवादी दृष्टिकोण से प्रभावित है , परंतु इन दो अतिशय सैद्धांतिक पक्षों के मध्य एक तीसरा पक्ष भी है जो शशवत विकास की बात करता है ।

प्रकार्यवाद के सैद्धांतिक मत की मान्यता है की विकास समाज की अपरिहार्य आवश्यकता है । क्योंकि कोई भी समाज बिना विकास के आगे प्रगति नहीं कर सकता । विकास और आधुनिक औधोगिक जरूरतों को पूरा करने के लिए खनीज संसाधनों का दोहन और उसका उपयोग आवश्यक हो जाता है । खनिजों के खनन हेतु लोगों को उस स्थान से विस्थापित कर कहीं और उनका पुनर्वास करने के विचार पर यह दृष्टिकोण बल देता है। दूसरी ओर विस्थापन के संबंध मे मार्क्सवादी दृष्टिकोण इसे शोषण की प्रक्रिया के रूप में देखता है । यह दृष्टिकोण मानता है की लोगों के विकास की कीमत आदिवसियों या मूल निवासियों को अपने जल, जंगल और जमीन से विस्थापित हो कर क्यों चुकनी पड़े ? यह दृष्टिकोण मानता है की ज्यादातर विस्थापन पूंजी की खुली लूट और अंतहीन लालच का परिणाम है । जिसकी कीमत जनजातीय समाज अपनी पुरखों की जमीन से विस्थापित हो कर चुका रहा है । विस्थापन की इस प्रक्रिया ने जनजातीय समाज के पूरे सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन के ताने बने को पूरी तरह से तहस नहस कर डाला है ।

इस संबंध मे तीसरा पक्ष शशवत विकास या धारणीय विकास वादी दृष्टिकोण का है । यह दृष्टिकोण मानता है की किसी भी समाज के लिए विकास अपरिहार्य इतना क्यों है कि

Copyright © 2020, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

इसकी कीमत हम अपने पर्यावरण के अतिशय नुकसान की कीमत पर तो हासिल नहीं कर रहे हैं ! अगर प्राकृतिक संसाधनों का दोहन अनिवार्यता अनिवार्य हो तो भी हर संभव यह कोशिश होनी चाहिए की इससे होने वाले नुकसान को न्यूनतम कैसे किया जाय ? अतः इस सिद्धांतिक पक्ष को मानने वाले लोगों का मानना है की शशवत विकास के विचार को अपना कर हम विस्थापन को न सिर्फ हम न्यून कर सकते हैं वरन इससे प्रभावित समाज के सामाजिक और सांस्कृतिक पहचान में बिना हस्तक्षेप किए हम धारणीय विकास के विचार को अपना सकते हैं ।

विषयवस्तु का विश्लेषण :–

झारखंड में खनीज की प्रचुरता है । भारत के अधिकांश खनीज संपदा की जरूरतों को यह राज्य पूरा करता है । भारत की ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने वाला कोयला, कल कारखानों के लिए लोहा , बॉक्साइट , अभ्रक आदि से लेकर परमाणु ऊर्जा के लिए यूरेनियम तक का उत्पादन यह राज्य करता है । कल कारखानों की जरूरत को पूरा करने के लिए सर्वप्रथम अंग्रेजों ने यहाँ बड़े पैमाने पर खदानों से खनीज निकलने का कार्य प्रारंभ किया । आजादी के बाद भी यह राज्य भारत की खनीज जरूरतों को बड़े पैमाने पर पूरा करता रहा है । परंतु ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने का खामियाजा यहाँ के स्थानीय जनजातियों को उठाना पड़ा है । सदियों से जिस जल, जंगल, जमीन पर वो रह रहें थें वहाँ से कोयला निकालने के लिए सरकार और कंपनियों को उन्हें विस्थापित करना पड़ा ।

विस्थापन ने जनजातियों के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन को पूरी तरह से बर्बाद कर दिया है । प्रारम्भिक दौर में जब जनजातियों की भूमि अधिग्रहण की जाती थी तब सरकारें यह प्रावधान करती थी की उनकी जमीन के एवज में उन्हें उचित मुआवजे एवं पुनर्वास कार्यक्रम के साथ रहने को जमीन और उनके परिवार के किसी सदस्य को नौकरी भी उपलब्ध कराएगी । परंतु इस व्यवस्था को कभी भी ईमानदारी से नहीं अपनाया गया । परिणाम यह हुआ की जनजातियों का कुनबा और उनका भ्रातृ दल पूरी तरह से छिन्न भिन्न हो गया ।

जनजातीय समाज की सबसे बड़ी विशेषता उनकी समुदायिकता में होती है । परंतु भूमि अधिग्रहण के कारण उन्हें अपने मूल स्थान से विस्थापित होना पड़ा और उनकी

Copyright © 2020, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

समुदायिकता पूरी तरह से तहस नहस हो गयी । क्योंकि भूमि अधिग्रहण के बाद एक स्थान पर पूरे समाज के लिए भूमि मिलना लगभग असंभव था । अतः लोगों को अपने परिवार को लेकर अकेले अलग अलग स्थानों पर प्रवसित होने को मजबूर होना पड़ा । जिसका असर उनकी पारिवारिक संरचना और नातेदारी व्यवस्था , विवाह एवं अन्य सामाजिक संबंधों एवं जीवन पर भी पड़ा है । इसे हम एक उदाहरण से समझने का प्रयास करते हैं जैसे उराँव जनजाति में बुजुर्गों की देख रेख के लिए दादा और पोती के मध्य शादी होना एक सामान्य परिघटना थी । परंतु किसी अनजान स्थान पर प्रवसित होने के बाद ऐसा करना उनके लिए आसान नहीं रह गया । उन्हें अपने नातेदारों से दूर जाने को मजबूर होना पड़ा , अपनी समुदायिकता का त्याग करना पड़ा । इसी तरह जनजातीय समाज में अपने युवा सदस्यों के लिए बेहद प्रगतिशील व्यवस्था 'युवगृह' जहाँ जनजातीय युवक एवं युवतियाँ किसी बुजुर्ग की निगरानी में आने वाले जीवन के पाठ को सीखते हैं । आज भी आधुनिक समाजों के पास ऐसे युवागृह जैसे संकल्पना का नितांत अभाव है । विस्थापन के कारण जनजातीय समाज के सदस्यों को अपने युवागृह जैसे व्यवस्था से भी वंचित होना पड़ता है ।

जनजातीय समज में भौतिक संस्कृति की तुलना में अभौतिक संस्कृति के प्रति उनके झुकाव को स्पष्ट तौर पर देखा जा सकता है । जनजातीय समाज सामान्यतः प्राकृति पूजक रहें हैं । इसलिए उनके आस्था के प्रतीक भी इसी प्रकृति में दृश्यमान होते हैं । इस कारण जनजातीय समाज का अपने पर्यावरण और प्रकृति के बीच का संबंध सह अस्तित्व और सह जीवता का है न की लालच का । इसलिए प्रकृति से जनजातीय समाज उतना हीं लेता है जितने की उनको आवश्यकता है ।

विस्थापन का असर उनके सांस्कृतिक जीवन पर भी पड़ा है । जनजातीय समाज सामान्यतः प्राकृतिक पूजक रहें हैं और झारखंड के विशेष संदर्भ में सरना धर्म की पूजा करते रहें हैं। परंतु मीशनरीज के आगमन के साथ बड़े पैमाने पर यहाँ धर्मांतरण हुआ । जनजातीय समज जो अपनी विशिष्ट सामाजिक सांस्कृतिक पहचान के कारण जाने जाते रहें हैं । उनकी अपनी विशिष्ट सामाजिक , सांस्कृतिक पहचान धीरे धीरे विलुप्त होते जा रही है । जनजातीय समाज का एक बड़ा तबका अपने आप को सरना धर्म से जोड़ता है और इस कारण वे जनजातीय समाज के किसी भी प्रकार के धर्मान्तारण करने का भी प्रबल

Copyright © 2020, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

विरोध करते हैं । हाल हीं में झारखंड विधान सभा में सरना धर्म की अलग मान्यता हेतु एक प्रस्ताव भी प्रस्तुत करने की बात कही जा रही है। । विस्थापन के कारण झारखंड के जनजातीय समाज को अपने धर्म, अपनी पूजा पद्धति अपने टोटम, पवित्र पहाड़ , पवित्र भूमि , पवित्र वृक्ष जिसकी सदियों से उनके पूरखे पूजा या पवित्र मानते आ रहें थे, उसे उनको त्याग करना पड़ा है । और इस प्रकार विस्थापन ने जनजातीय समाज की सामाजिक और सांस्कृतिक पहचान को हाशिये पर ला खड़ा किया है ।

निष्कर्षः–

पूरी दुनिया में विकास का खामियाजा सबसे अधिक किसी को भुगतना पड़ा है तो वो वहाँ के मूल निवासी रहें हैं । जेम्स कैमरून ने खनीज संपदा के दोहन और विकास के द्वंद को बड़े हीं बेहतर ढंग से अपनी फिल्म 'अवतार' में भी दिखाया की समाज के एक हिस्से के विकास के लिए कोई खनीज संपदा कितनी महत्वपूर्ण है परंतु उसी खनीज संपदा के क्षेत्र में सदियों से निवास करते आ रहे समाज को इसकी कीमत अपनी सामाजिक और सांस्कृतिक पहचान को खो कर चुकाना पड़ता है । ठीक वैसे हीं झारखंड के जनजातियों को भी देश की खनीज जरूरतों को पूरा करने की कीमत अपनी सामाजिक और सांस्कृतिक पूंजी को गंवा कर चुकानी पड़ रही है ।

संदर्भ ग्रंथ :–

Avtar Movie: James Cameron

Census, 2001 & 2011.

https://khabar.ndtv.com/news/jharkhand/what-is-sarna-why-is-demand-for-new-religion-in-jharkhand

Majoomdar, D. N. & Madan, T.N (2009) "An Introduction to Social Anthropology", Noida: Mayur Paperbacks.

Ogburn, William (1964), "On Culture and Change" Chicago: Chicago University Press.

Prabhu, P.N (1954), "Hindu Social Organisation", Bombay: Popular Book Depot.

Taylor, E.B (1913), "Primitive Culture" North Carolina: University of North Carolina Press.

www.jharkhand.nic.in

Copyright © 2020, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies